DSSSB TGT & PGT
Part-B
SCHOLAR BATCH
संस्कृत
अभिज्ञानशाकुन्तलम् (चतुर्थ अंक)
Part -6
LIVE
08-08-2024 05:00 PM

शनिवार दोपहर 1 PM

अभिज्ञानशाकुन्तलम् (चतुर्थ अंक)

शकुन्तला - (लड़खड़ाने का अभिनय कर) कौन है जो मेरे वस्त्र को खींच रहा है?

(इति परावर्ते) (इस प्रकार घूमती हैं)

काश्यप - वत्से ! **काश्यप** - पुत्री !

यस्यत्वयां व्रणविरोपणमिङ्गुदीनां
तैलं न्यषिच्यत मुखे कुश सूचिविद्धे।
श्यामाकमुष्टिपरिवर्धितको जहाति
सोऽयं न पुत्रकृतकः पदवीं मृगस्ते ।।1 4।।

अन्वय - यस्य कुशसूचिविद्धे मुखे त्वया व्रणविरोपनम् इंगुदीनां तैल न्यषिन्यत सः अर्थ श्यामाकमुष्ठिपरिवर्धितकः पुत्रकृतकः मृगः ते पदवीं न जहाति।

अनुवाद - जिसके कुशों के तीक्ष्ण अग्रमात्र से कंटे हुए मुख मे तेरे द्वारा घावभरने वाला इंगुदी नामक तेल लगाया गया था और जिसे श्यामाक की मुट्ठी खिला-खिलाकर स्नेह के साथ पाल - पोस कर बढ़ाया था, वही पुत्र बना मृग तेरा मार्ग नहीं छोड़ रहा है।

व्याख्या - प्रस्तुत श्लोक मे मृगछौना द्वारा शकुन्तलाके वसन खीचे जाने के बाद काश्यप् कहते है कि **यस्य** = जिसके, **कुशसूचिविद्धे** = कुशोके तीक्ष्ण अग्रमाग से कटे हुए, **मुखे** = मख में, **त्वया** = तेरे द्वारा, **व्रणविरोपनम्** = घावभरने वाला, **इंगुदीनां तैल** = इंगुदी नामक तेल, **न्याषिन्यत्** = लगाया गया था। **स: अथं** = वही, **श्यायाकयुष्ठिपरिवर्धितक:** = श्यामाक की मुठी खिला खिलाकर स्नेह के साथ पाल - पोस कर बढ़ाया गया था, **पुत्रकृतक:** = पुत्र बना, **मृग: मृग ते पदवी** = तुम्हारा मार्ग, न जहाति नही छोड़ रहा है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी -

व्रणविरोपणम् = व्रणानां विरोपणम् वि रूप+णिच् + ल्युट्

कुशसूचिविद्धे = कुशानां सूचिमिः विदधे कुशसूचि विद्धे (तत्पु०)।

न्यषिच्यत = निसिच्+अड़ प्रस्तुत श्लोक मे छेकानुप्रास, वृत्यनुप्रास, तथा काव्यलिंग अलंकार है और बसन्तलिलका छन्द है।

शकुन्तला - वत्स। कि सहवास परित्यागिनीं मामनुसरसि ? अचिरप्रसूतया जनन्या विना बर्धितोऽसि । इदानीमपि मया विरहितं त्वां तातश्चिन्तयिष्यति। निवर्तस्व तावत् ।

शकुन्तला - पुत्र! एक साथ निवास को छोड़ने वाली मेरा अनुसरण कर रहे हो? जन्म लेते ही विना मा के रहने पर तुम्हे मैने बढाया है। इस समय भी मेरे न रहने पर पिता जी तुम्हारा ध्यान रखेगे। अतएव लौट जावों।

(इति रूदती प्रस्थिता) (रोती हुयी चल देती है)

काश्यप - उत्पक्ष्मणोर्नयनयोरूपरूद्धवृत्तिं
बाष्पं कुरू स्थिरतया विहानुबन्धम्।
अस्मिन्नलक्षितनतोन्नतभूमि भागे
मार्गे पदानि खलु ते विषमीभवन्ति ॥ 15 ॥

अन्वय - उत्पक्ष्मणोः नयनयोः उपरूद्धवृत्ति वाष्पं स्थिरतया विरतानुबन्धनम् कुरू। खलु अलक्षितनतोन्नतभूमिभागे अस्मिन् मार्गे ते पदानि विषमीभवन्ति।

अनुवाद - उन्नत बरौनियों वाले आखों मे प्रवाह को अवरूद्ध करने वाले आँसू को धैर्यतापूर्वक निरन्तर बहने से रोको। क्योकि न देखे गये ऊँची-नीची भूमि वाले मार्ग में तुम्हारे पैर सीधे नहीं पड़ रहे हैं।

व्याख्या - प्रस्तुत श्लोक मे काश्यप शकुन्तला को रोने से मना करते हुए कहते है कि **उत्पक्ष्मणोः** = उन्नत वरौनियों वाले, **नयनयोः** = आँखो मे, **उपरूद्धवृत्ति** = प्रवाह को अवरूद्ध करने वाले, **वाष्पम्** = आँसू को, **स्थिरतया** = धैर्यतापूर्वक, **विरतसुबन्धम् कुरू** = निरन्तर वहने से रोको। **खलु** = क्योकि, **अलक्षितनतोन्नतभूमिभागे** = न देखे गये ऊँची-नीची भूमि वाले मार्ग में, **ते पदानि** = तुम्हारे पैर, **विषमीभवन्ति** = सीधे नही पड़ रहे हैं।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – उत्पक्ष्मणो = उद्तानि पक्ष्माणि ययोतयोः (बहु) उपरूद्धवृत्तिं = उपरूद्धा वृत्तिः येन तम् () स्थिरतया = स्थिर + तल् तृ० एव विहत = वि + रम् + क्त। विषमीभवत्ति = विषम + भू + लट् । प्रस्तुत श्लोक मे काव्यलिंग अलंकार है तथा बसन्त तिलका छन्द है।

शाड़र्गरव- भगवन् । ओदकान्तं स्निग्धो जनोऽनुगन्तव्यं इति श्रूयते। तदिदं सरस्तीरम् । अत्र संदिश्य प्रतिगन्तुमर्हसि ।

शाङ्र्गरव - भगवन् ! तालाब तक स्नेही जनों के साथ विदा करने के लिए जाना चाहिए। इस प्रकार शास्त्रों में सुना जाता है। यहीं से संदेश देकर लौट जाइये।

काश्यप - तर्हीं मां क्षीर वृक्षच्छायामाश्रयाम:।

काश्यप - इसलिए इस दूध वाले वृक्ष की छाया का आश्रय लेकर हम रूके।

टिप्पणी - यहाँ क्षीर का वृक्ष है, इसके पत्ते कोमल व सघन होते हैं। इसमें छोटे-छोटे फल लगते हैं, मीठे होते है, इसकी समिधा का प्रयोग गायत्री की आराधनामें होता है, सम्पादक नें इसका पेड़ देखा है। इसे बरगद आदि बताने वाले वाले भ्रान्त हैं।

(सर्वे परिक्रम्य स्थिताः) (सभी घूमकर खड़े होते हैं)

काश्यप - (आत्मगतम्) किं नुखलु तत्रभवतो दुष्यन्तस्य युक्तरूपमस्माभिः संदेष्टव्यम् ?

काश्यप - (मन में) माननीय दुष्यन्त के लिए हम कौन सा उचित संदेश दे सकते हैं ?

शकुन्तला - (जनान्तिकम्) हला ! पश्य नलिनीपत्रान्तरितमपि सहचरमपश्यन्त्यातुरा चक्रवाक्यारटति दुष्करमहं करोमिति तर्कयामि ।

शकुन्तला - (हाथ की ओट से) सखि ! देखो नलिनी पत्र के ओट में होने पर सहचर को न देखकर चक्रवाकी चिल्ला रही है इससे तो मै विचार करती हूँ कि मै कठिन कार्य कर रही है।

टिप्पणी - चक्रवाकी का रोदन अपशकुन है, जो आने वाले अशुभ का संकेतक है।

अनुसूया - सखि ! मैव मन्त्रयस्व ।

अनुसूया - सखि ! ऐसी बाते न सोचो।

एषापि प्रियेण बिना गमयति रजनीं विषाददीर्घतराम् ।
गुर्वपि विरहदुःखमाशाबन्धः साहयति ॥ 16 ॥

अन्वय - एषा अपि प्रियेण बिना विषाददीर्घतराम् रजनी गमयति आशाबन्धः गुरू अपि विरहदुःख साहयति ।

अनुवाद - यह भी प्रियतम के बिना दुः ख के कारण बड़ी बनी हुयी रात्रि बिताती है। आशा का बन्धन विरह के महान दुःख को भी सहन करने योग्य बना देता है।

व्याख्या - प्रस्तुत श्लोक मे शकुन्तला को आशा बघाते हुए अनुसूया कहती है कि - **एषा अपि** = यह भी, **प्रियेण बिना** = प्रियतम् के बिना, **विषाददीर्घतराम्** = दु:ख के कारण बड़ी बनी हुयी, **रजनी** = रात्रि, **गमयति** = बिताती है। आशाबन्धः = आशा का बन्धन, **गुरू अपि विरह दु:ख** = विरह के बड़े दु:ख को भी, **साहयति** = सहन करवा देता है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी - विषादः दीर्धतराम् = विषादेन् दीर्घतराम् (तत्पुरू०) आशाबन्धः आशायाः बन्धः । प्रस्तुत श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार तथा आर्या छन्द है।

काश्यप - शार्ङ्गरव ! इति त्वया मद्वचनात्स राजा शकुन्तलां पुरस्कृत्य वक्तव्यः।

काश्यप - हे शार्ङ्गरव ! शकुन्तला को अपने आगे कर तुम मेरे वचन को राजा से कहना।

शार्ङ्गरव - आज्ञापयतु भवान् ।

शार्ङ्गरव - आप आज्ञा दे।

काश्यप -

अस्मान्साधु विचिन्त्य संयमधनानुच्चैः कुलं चात्मन-
स्त्वयस्याः कथमप्यबान्धवकृतां स्नेहप्रवृत्तिं च ताम्।
सामान्यप्रतिपत्तिपूर्वकमियं दारेषु दृश्या त्वया,
भाग्यायत्तमतः परं न खलु तद् वाच्यं वधूबन्धुभिः ।।।7।।

अन्वयः अस्मान् संयमधनान् च आत्मनः उच्चैः कुलं च त्वयि अस्या कथमपि अवान्धवकृतां तां स्नेह प्रवृत्ति च साधु विचिन्त्य, त्वया इयं दारेषु सामान्यप्रतिपतिपूर्वक दृश्या। अतः परं भाग्यायत्तम् । तत खलु बधूवन्धूभिः न वाच्यमा

अनुवाद - हम लोगो के पास संयम ही धन है (तथा) अपने उत्तम कुल का, आपके प्रति इसके स्वाभाविक रूप से बन्धुओं से रहित कराये गये उस प्रेम सम्बन्ध का सम्यक विचार कर आपके द्वारा इसको अपनी पत्नियों में समान आदर देते हुए देखे। इससे अधिक तो भाग्य के अधीन है। जिसे वधू के भइयों को नहीं कहना चाहिए।

व्याख्या - प्रस्तुत श्लोक मे काश्यप राजा के लिए संदेश देते हुए शारंगरव से कहते है कि-अस्मान् संयमधनान = हम लोगों के पास संयम ही धन है (तथा) आत्मनः उच्चैकुलं च = और अपने उत्तम कुल का, त्वयि अस्था = आपका उसके प्रति कथमपि = स्वाभाविकरूप से, अबान्धवकृतां = बन्धुवो से रहित कराये गये, तां स्नेह प्रवृत्तिच् = उससे प्रेम सम्बन्ध का, साधु विचिन्त्य = सम्यक विचार कर, त्वया = आपके द्वारा, इयं = इस, दारेषु = अपनी पत्नियों में,

सामानयप्रतिपत्तिपूर्वकं = समान आदर देते हुए, दृश्या = देखे, अत: पर = इससे अधिकतो भाग्ययत्म = भाग्य के अधीन है।.

ततः खलु = जिसे, वधू बन्धूभिः वधू के अभिजनों को, न वाच्यम = नहीं कहना चारिए।

व्याकरणात्मक टिप्पणी - संयमधनान् = संयम एव धन येषां (बहुब्रीहि) अबान्धवकृतां = न बान्धवकृतां अबान्धवकृतां ताम्।

प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुतप्रसंशा, काव्यलिंग तथा वृत्यनुप्रास अलंकार है तथा शार्दुलविक्रीडित छन्द है।

शारंगरव - गृहीतः सन्देश। शारंगरव सन्देश को ग्रहण किया।

काश्यप - वत्से! त्वमिदानीमनुशासनी यासि। वनौकसोऽपि सन्तो लौकिकज्ञा वयम्।

काश्यप - पुत्री ! इस समय तुम्हे शिक्षा देनी है। तपोवनवासी होने पर भी लौकिकता का ज्ञान हमे है।

शारंगरव - न खलुधीमयं कश्चितविषयोनाम् ।

शारंगरव - विद्वत् जनों को कुछ भी अज्ञात नहीं होता।

काश्यप - सा त्वमितः पतिकुलं प्राप्य -

काश्यप - यह तुम यहाँ से स्वामी के घर पहुँचकर-

शुश्रुषस्व गुरून् कुरू प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने

भर्तुर्विप्रकृताऽपि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।

भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी

यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः ॥18॥

विपरीत

अन्वय - गुरून् शुश्रुष्व । सपत्नीजने प्रियसखीवृत्तिं करू। विप्रकृतापि रोषणतया भर्तुः प्रतीपं मा स्म गमः। परिजने भूयिष्ठं दक्षिणा भव। भाग्येषु अनुत्सेकिनी । एवं युवतयः गृहिणीपद यान्ति। वामा कुलस्य आधयः ।

अनुवाद - श्रेष्ठ जनों की सेवा करना। अपने सौत के साथ प्रियसखी के समान व्यवहार करना। तिरस्कृत होने पर भी क्रोध से स्वामी के विपरीत आचरण न करना।

सेवकों के प्रति उदार बनना तथा भाग्योदय के समय घमंड न करना। इस प्रकार युवतियाँ गृहस्वामिनी का पद प्राप्त करती है उसके विपरीत व्यवहार करने वाली कुल के लिए शोक का कारण बनती है।

व्याख्या - प्रस्तुत श्लोक में काश्यप शकुन्तला को समझाते हुए कहते है कि गुरून शुश्रुस्व = श्रेष्ठ जनों की सेवा करना। **सपत्नीजने प्रियसरवीवृत्तिं करू** = अपने सौत के साथ प्रियसखी के समान व्यवहार करना।

विप्रकृतापि रोषणतया = तिरस्कार होने पर भी क्रोध से, भर्तुः प्रतीपं मास्मगमः = स्वामी के विपरीत आचरण न करना। परिजने भूयिष्ठ = सेवको के प्रति उदार बनना तथा, भाग्येषु अनुत्सेकिनी = भाग्योदय के समय घमंड़ न करना। एवं युवतयः = इस प्रकार युवतियाँ, गृहिणीपदं यान्ति = गृहस्वामिनी का पद प्राप्त करती है। वामा कुलस्य आधयः = इसके विरूद्र आचरण करने वाली कुल के लिए शोक का कारण बनती है।

+ ति। प्रस्तुत श्लोक में अर्थान्तरन्यास, रुपक, निर्देशना अलंकार है तथा शार्दूलविक्रीडितछन्द है।

कथं वा गौतमी मन्यते। गौतमी का इस पर क्या राय है।

गौतमी - एतावान्वधूजनस्योपदेश:। जाते एतत् सर्वम् खलु अवधारय

गौतमी - यही वधू के लिए उपदेश होता है। पुत्री। यह सब कुछ ठीक से स्मरण करलो।

काश्यप - वत्से ! परिष्वजस्व मां सखीजनं च।

काश्यप - पुत्री मुझसे और अपने सखियों के गले मिलो।

शकुन्तला - तात् ! इतं एव कि प्रियंवदाऽनसूये सख्यो निवर्तिष्यन्ते।

शकुन्तला - पिताजी ! यहाँ से ही क्या प्रियंवदा आदि सखियाँ चली जायेगी।

काश्यप - वत्से ! इमे अपि प्रदेये। न युक्तमनयोस्तत्र गन्तुम्। त्वया सह गौतमी यास्यति।

काश्यप -पुत्री ! इनकी भी शादी करनी है। इनका वहाँ जाना अच्छा नही है। तुम्हारे साथ गौतमी जायेंगी।

शकुन्तला: (पितरमाश्लिस्य) कथमिदानीं तातस्याङ्कापरिभ्रष्टा मलयतरोन्मीलिता चन्दनलतेण दंशान्तरे जीवितं धारयिष्ये।

शकुन्तला: (पिता के गले मिलकर) किस प्रकार अब में मलय वृक्ष से उखाडी गयी चन्दन लता के समान पिता के अंक से छूटकर अन्य देश में जीवन धारण करूंगी।

काश्यप - वत्से ! किमेवं कातरासि ?

काश्यप - पुत्री ! इस प्रकार अधीर क्यो हो रही हो।

(इति निष्क्रान्ता सर्वे) -(सब प्रस्थान करते है)। चतुर्थ अंक का वर्णन विराम ॥

अभ्यास प्रश्न -3

1. काश्यप किस मन्त्र से शकुन्तला को आशीर्वाद देते हैं:-

(1) ऋग्वेद से

(2) लौकिक छन्द से

(3) देते ही नही

(4) कुछ कह नही सकेमे।

2. प्रकृति के तरफ से शकुन्तला को जाने की सूचना किससे प्राप्त होती है।

(1) कोयल द्वारा

(2) मोर द्वारा

(3) वृक्षो द्वारा

(4) नही जानते

3. शकुन्तला के साथ हस्तिनापुर कौन जाता है।

(1) प्रियंवदा

(2) शारंगरव

(3) अनसूया

(4) करभक